पूत सपूत तो धन कैसा पूत कपूत तो धन कैसा!

पान खा खा कर वो अपने सारे दॉत कोयले की तरह काला कर डाले थे. ऊपर से वो ठर्रा भी रोज नियम से पानी की तरह पीते थे। उनके पास शरीर के नाम पर सिर्फ चमड़े से ढ़ॅका एक पंजर मात्र बचा था। पान तो वो अपने कॉलेज के दौरान ही खाना शुरू कर दिये थे. शराब की उन्हे कब लत पड़ी .ये मुझे पता नही है। मुझे सिर्फ इतना ही पता है. कि जब वो भोजापुर वापस आकर अपने हिस्से की गृहस्थी सम्हाले. तब उन्हे न तो सुबह और शाम की परवाह रही और न अपने यश और अपयश की। अपना कफ़न उन्होने अपने ही हॉथों बुनना शुरू कर दिया था। मन से वो हार चुके थे। अब वो अपना तन जलाये चले जा रहे थे।

रिश्ते मे वो मेरे चाचा लगते थे। क्या दुख था उन्हे. यह उनके मॉ बाप तक न जान पाये और न जानना चाहे। उन्हे अपनी संकीर्ण नियतों से फुर्सत ही कब थी!

भोजापुर की चल व अचल सम्पति मेरे बाबा स्व दामोदर सिंह की बनाई या कमाई हुई है। वो पेशे से कानूनगो थे। लोगों की जमीने मापते थे। उनके पास एक तेज तर्रार घोड़ी भी थी। वो धोती कुर्ता पहनते थे। चप्पलों जूतों से उन्हे बड़ी चिढ थी। वो लौंग बूट पहनते थे। घर वापस आने पर वो एक मचिया पर बैठ जाते थे। एक नौकर उनके पास आकर खड़ा हो जाता था और पलट कर उनका बूट ऐसे दबोच लेता था जैसे वो बूट नही कोई सिर कटा छटपटाता मुर्गा दबोचे हो। उनके बूट के खुलते ही चारो ओर चॉदी की असर्फिया बिखर जातीं थीं। आजी अपने ऑचल मे असर्फिया बटोरने लग पड़तीं थीं।

दुर्भाग्यवश मेरे बाबा को बड़ी छोटी जीवन रेखा मिली। राजा भृगु का ये सन्तान हमे अपनी बयालीस वर्ष की अवस्था मे ही छोड़ गया. वरना पता नही वो हमारे लिये क्या क्या जोड़ जाता. क्या क्या छोड़ जाता! मेरे बाबा के दो और छोटे भाई थे। एक राजकीय सेवा मे थे और दूसरे काशी नरेश की सेना मे। हमारा परिवार संयुक्त था। बाबा के देहान्त के बाद मेरे सगे चाचा बाबू बेचन सिंह के जुओ पर पूरे घर गृहस्थी का समवेत भार पड़ा। मेरे दूसरे सगे छोटे चाचा की पढाई लिखाई मे कोई रूचि न थी। वो घर से भाग कर सेना मे भर्ती हो गए। बचे बाबूजी. जिनकी शिक्षा का अल्प भार मेरे दूसरे बाबों पर पड़ा। अपने दूसरे भाईयों की तरह मेरे बाबूजी ने अपना बचपन न देखा और न भोगा। उन्हे बचपन मिला ही नही। अनाप शनाप की कमाई पर सिर्फ गिद्धों की ऑखे होती हैं. स्वयम या अपने सगे उससे सिर्फ प्रताड़ना ही पाते हैं। सबसे छोटे चाचा इन सारे बवालों से मुॅह मोड़कर थ्री नाट थ्री सम्हाल लिये। बाबूजी व मेरे बड़े चाचा एक दूसरे के कन्धों पर अपनी हथेलियॉ धरे जवान हुए।

भोजापुर की सारी सम्पत्ति मेरे बड़े चाचा बड़ी कुशलता से सम्हाल और बचा ले गए। आज जब मै एक एक परिवार को अलग अलग कर के देखता हूँ .तो एक बात मेरे सामने बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है. कि हमारे संयुक्त परिवार के प्रति बाबा के बाद मेरे बड़े चाचा का त्याग और योगदान सबसे बड़ा रहा। मेरी सभी बुआओं की शादिया गॅाव से ही हुई। सारे लगन. श्राद्ध. व बच्चों के मुंडन गॅाव से ही सम्पन्न हुए। चाचा ध्रुव की तरह डटे रहे। बदले मे न उन्हे श्रेय मिला और न कोई यश। भोजापुर के इस नामी गरामी गृहस्थ से परम्परागत जमीने वापस ली जाने लगी। ये संयुक्त परिवार तभी तक बना रहा .जब तक लोगों ने इसमे अपने फायदे देखे। जब सबके अपने अपने काम निकल गए. तब वो साधिकार अपना अपना हिस्सा मॅागने आ बैठे। उस सम्पत्ति का. जिसमे उनका रत्ती भर भी योगदान न था। राजा भृगु की ये सन्ताने इतनी निकम्मी व बेशर्म निकलेंगी. ये मैने कभीं सपने मे भी नही सोचा था।

मेरे बड़े चाचा का एक सुन्दर सा नाम राजेन्द्र बस शादी ब्याहों के कार्डो पर ही पढने को मिलता था। उनके पैदा होते ही दरिद्र ब्राम्हणो ने कई शंकायें उठाई। मेरी आजी ने उन्हे एक तराजू पर अनाज से तौला। अनाज भी उनका था. बेटा भी उनका था। अनाज एक चमाईन ले गई। दूर दूर से रिश्तेदार आए थे। दबा कर मूछी बरी बनी। रिश्तेदार पट्टीदार चावल दाल मूछी बरी गर्दन तक जीम कर डकारते बईठका की ओर बढे। पंडित बाम्हन बढवल वाली डगर थामे। आजी दुपहरिया भर चमाईनो को अनाज बॅाटती रही। इस उत्सव का एक नाम भी था. . राजेन्द्र एक चमाईन को बेच दिये गए। मेरे चाचा बेचल अर्थात बेच दिये गए हो गए। समय के साथ वो बेचल से बेचन हो गए। अब उनका यही नाम था।

मेरे दूसरे बाबा. जो राजकीय सेवा मे थे. उन्हे हम धनुषिया बाबा कह के बुलाते थे। उनके पास एक दुनाली बन्दूक थी. जिसमे एक पट्टा लगा था। शादी ब्याह के अवसर पर जब वो अपनी बन्दूक कन्धे से लटका कर निकलते थे. तो ऐसा लगता था जैसे वो धनुष लटकाए हों। गॅाव का कौन सा बच्चा सबसे पहले उन्हे धनुषिया बाबा कह कर पुकारा. ये मुझे पता नही. पर होश सम्हालने व बाद के दिनो मे मै उन्हे इसी नाम से जानता व पुकारता था। मेरी आजी का नाम सोनराजी था. जो समीप के ही एक गॅाव फूल्ली की रहने वाली थीं। उनके मायके मे अच्छी भली गृहस्थी थी. समवेत परिवार था। बस एक समस्या थी. फूल्ली तक जाने के लिए यातायात की कोई व्यवस्था न थी। सिवाय पैदल व रास्ते के धूल फॅाकने के अलावे दूसरा कोई जरिया ही न था। मेरे बाबा अक्सर अपने ससुराल जाया करते थे। जब मन हुआ. कन्धे से एक थैला लटकाए. अपनी मूठ वाली छड़ी सम्हाले और चल पड़े फूल्ली। वो रूकते वहॅा कभी न थे। शाम तक फिर वापस आ जाते थे। गर्मी की छुट्टियों मे बाबूजी सपरिवार भोजापुर आ जाते थे। बाबा फूल्ली जाने के लिए मुझसे ही पूछते थे-का हो फूल्ली चलब्या! तो न चाहते हुए भी मै उन्हे मना नही कर पाता था। फूल्ली मे आदर सम्मान भी बहुत होता था। बाबा तो बई ठका मे ही अपना आदर सत्कार करवाते थे. पर मै घर के रसोई तक चला जाता था। एक बड़े से बरामदे मे कन्डे की आग पर बड़ी बड़ी बटलोहियों मे खाने पकते थे। रसोई मे तीन चार बहूएॅ साथ लगी रहती थीं। गर्मी की बजह से सारी बहूएॅ लाल नीले पीले छींटो की चोलियॉ पहने रहती थीं।

बाबा का बनारस मे भी दो कमरे का किराये का एक मकान राम कटोरा मे था। दवा दारू के लिए उन्हे अक्सर बनारस जाना पड़ता था। आजी से तो उन्हे कभीं कभार फुर्सत मिल जाती थी. पर फाइलेरिया ने उनका संग आजीवन न छोड़ा। अपनी लुंगी खोल के उसी से ओट कर के पता नही वो कौन सी दवा अपने पोते पर मलते रहते थे. जिससे बड़ी बास आती थी।

धनुषिया बाबा की तरह मेरे एक और अर्कमण्य बाबा थे. जो आजीवन जिम्मेवारियों से मुॅह मोड़े रहे। उन पर उनके शौक सदा हावी रहे। रबड़ी मलाई .कचौरी जलेबी. कपड़े लत्ते के अलावे हाकी खेलना. रंडियो को सरपरस्ती देना. बाई मुज़रा अब मै और कौन कौन से उनके शौक गिनवाऊॅ! उनकी पत्नी बड़ी ही खानदानी थीं। छोटे कद की होने की वजह से हम उन्हे छोटकी आजी कह के बुलाते थे। उनका सारा जीवन भोजापुर के एक बन्द ॲधेरे चौके मे ही बीता। आजीवन वो बाबा की महज़ एक सेविका ही रहीं। छोटकी आजी ने दो बेटी और एक बेटा जना. जो किसी भी अर्थ मे श्रवण कुमार न

था। स्वार्थ उसे सीधे बाबा से विरासत मे मिला था।
फूल्ली गॉव, जहॉ की मेरी धनुषिया बो आजी थीं, के बारे एक किवदन्ति जग उजागर थी, कि वहॉ की लड़किया समवेत परिवार की होते हुए भी जिस परिवार मे भी ब्याही जाती हैं, बॅटवारे का पहल वो ही करती हैं। धनुषिया बाबा को दो बेटे व चार बेटियॉ थीं। उनकी सारी बेटियॉ भोजापुर से ही सम्पन्न घरों मे ब्याही गई, पर बेटों को वो शहरों मे टिका कर पढा रहे थे। अपने अनाथ भतीजों पर उन्हे तनिक भी दया न आई। बाबूजी छोटे बाबा के साथ रहकर बनारस मे पढ रहे थे। बाबा हलवाईयों की दूकानो से कचौरी जलेबी रबड़ी मलाई मॅगवा कर नाश्ता करते थे। बड़े चाचा ही रह रह कर अपने सिर पर दौनी रखकर अपने बड़े भाई के लिए गॉव से गुड़, ढूंढ़े, भूने चने लाई, खाजे, भैंस की शुद्ध घी इत्यादि पहुँचा आया करते थे।
धनुषिया बाबा के बड़े बेटे इन्डियन स्कूल आफ माईन्स धनबाद से माइनिन्ग इन्जीनयरिन्ग करके इन्गलैन्ड का दौरा भी लगा आए। वापस आते ही उन्हे दुर्गापुर मे एक अच्छी खासी नौकरी मिल गई। बाबूजी भी धनबाद के इसी विद्दालय मे कार्यरत थे। गिरजा बाबा के श्रवण कुमार काशी विद्दापीठ से सोशियोलाजी से थर्ड डिवीजन मे एम ए पास कर के वर्षो बेकार बैठे रहे और धनबाद मे हमारे यहॉ रहकर नौकरी ढूॅढते रहे। अन्त मे उन्हे भी एक कोलयरी मे पर्सनलर आफीसर की नौकरी मिल गई। नौकरी मे आते ही इन दोनो चाचाओं ने हमसे अपने सम्पर्क खीचने शुरू कर दिए। धीरे धीरे ये सम्पर्क समाप्तप्राय हो चले।
धनुषिया बाबा के छोटे बेटे आगरा मे रहकर इन्टर कर रहे थे। गर्मी की छुट्टियों मे वो भी गॉव आते थे। उन्हे सफेद रंग बेहद प्रिय था। सफेद पैंट, सफेद कमीज, सफेद जूता और बीच से कढे उनके घूॅघराले बाल| वो किसी अभिनेता से कम न लगते थे। पान तो वो उन्ही दिनों से खाना शुरू कर दिये थे, शायद शराब की भी उन्हे लत लग चुकी थी। अब सोनराजी आजी को फूल्ली के प्रति न्याय करने की सूझी, पर उनका ये बेटा आड़े आ जाता था। उनके शादी की उम्र हो चली थी पर उनसे इन्टर तक पास न हुआ जा रहा था, और ऊपर से फैशन के अलावे वो कई शौक भी पाल रखे थे। आजी ने बॅटवारे की तिथि मन ही मन टाल दी। थोड़ा सा सबर उन्हे करना ही था। संयुक्त परिवार के नाम पर इस चाचा का ब्याह छोटकी आजी के रिश्तेदारियों मे तय हो गया। हमारी नई चाची सॉवली होते हुए भी बेहद सुन्दर थीं। बड़े भयावह भविष्य से उनका लगन हुआ था।
धनुषिया बाबा और सोनराजी आजी की अपने बच्चों के प्रति सारी जिम्मेवारियॉ खत्म हो चलीं। अब आजी को संयुक्त परिवार मे कष्ट्र ही कष्ट्र था। आजी ये सारे कष्ट्र पूरे गॉव मे रो रो कर सुना आती थीं। बाबा पर भी उन्होने अहर्निश दबाव डालना शुरू कर दिया।
हम उन दिनो बेहद छोटे थे। आखिरकार धनुषिया बाबा अपनी चुप्पी तोड़े। बॅटवारे का दिन तय हो गया। बाबूजी अपने भाईयों मे सबसे बड़े थे। उन्हे ही धनुषिया बाबा के सामने बैठना पड़ा। बगल के राम जनम पंडित जी के हॉथों मे तटस्थता दी गई। ये इस संयुक्त परिवार का पहला बंटवारा था। पूरा गॉव सामने के इनार व बगल वाली गली मे आ जुटा। आजी बाबा को सबकुछ समझा बुझा कर अपने दालान मे इत्मिनान से हुक्का गुड़गुड़ा रही थीं। बाबा को बेचन चाचा और उनके छोटे छोटे बच्चों पर तनिक भी दया न आई। वो ये भूल गए कि बिना बेचन चाचा के अकेले उनके वश की एक भी बेटी की शादी न थी। वो ये भी भूल गए कि उनके इसी अनाथ भतीजे ने अपने खेलने कूदने की उम्र मे इस पूरे गृहस्थी का जुआ अपने कमजोर कन्धे पर रखकर वो सबकुछ बचाया, जो वो साधिकार बॉटने बैठे थे। ये वही बाबा थे, जिनके चरण छूते हम अघाते तक न थे।
जमीन, घर, बईठका, गाय, बैल, बाग, बगीचे सबके तीन हिस्से हुए। यहॉ तक कि बर्त्तनो के लिए भी बाबा पर्चियॉ डलवाए। गुंजायश न होने की वजह से पुश्तैनी घरों मे दीवारें न खड़ी की जा सकीं। उन्हे अपने हिस्से के कमरे मिल गए। बाबा अपने रामकटोरा वाला मकान छोड़कर हमेशा के लिए भोजापुर आ गए। संचित निधि के नाम पर उनके पास टीन के आठ दस बक्से थे, जिनमे ताले लगे हुए थे। दो चार टेबल कुर्सिया, जो उनके पास थीं, वो कब का गॉव मे ला चुके थे। सारे बक्से वो बईठका के एक कमरे मे रखवा कर उसकी ताली अपने जनेऊ मे बॉध लिए। आगरे वाले चाचा गृहस्थी मे तो आ गए, पर कहॉ आगरा और कहॉ भोजापुर। दूसरा विकल्प भी तो उनके पास नही था। खेती न करते तो और क्या करते! बाबा अपनी आखिरी पुंजी लगाकर एक नेशनल ट्रेक्टर खरीदे, जो हमारे गॉव का पहला ट्रेक्टर था। सारे गॉव वाले यही कहते घूमते फिरते थेः पइसवा जाई कहॉ! जिनगी भर बस पइसे त बटोरलं, शादी बियाह त कूल बेचने त करवउलं।
चाचा जी अपने सफेद पैंट, कमीज और जूते मे ट्रेक्टर से सकलडीहा घूमने गए, जहॉ का देशी शराब का ठेका उन्हे बड़ा पसन्द आया। वापस वो नशे मे धुत्त एक फिल्मी गाना गुनगुनाते हुए आए। थोड़ी ही देर मे वो अपने दालान मे नजर आए। उल्टियॉ कर कर के वो अपने सारे कपड़े साने हुए थे। गर्भवती चाची लोटे के पानी से उन्हे कुल्ला करवा रही थी। रह रह कर देशी ठर्रे का भभका उठता फिर उल्टियों के दौरे पड़ते। बाबा और आजी चुपचाप उदास बैठे अपने बेटे की नाश लीला देख रहे थे।
उनके सफेद कपड़े और जूते भोजापुर के धूल धक्कड़ों व कीचड़ों का ताप न सह सके। उन्हे विवशतः लुंगी बॉधनी पड़ी। खादी का मटमैला कुर्त्ता पहनना पड़ा। सिर पर लाल अंगोछी और पैरों मे स्पन्ज की नीली चप्पल आ गई।
भोजापुर की एक कच्ची सड़क एक रेलवे क्रासिंग तक जाती थी, जहॉ से बनारस से चली सड़क मुगलसराय, चन्दौली होते हुए सकलडीहा जमनिया तक जाती थी। क्रासिंग के फाटक अक्सर बन्द होते थे, जिसकी वजह से बसों को वहॉ रूकना पड़ता था। इस क्रासिन्ग पर एक पक्का पोखरा था और साथ मे लगी एक पनचक्की और निब्बू सिंह की झुग्गी, जहॉ वो पान बीड़ी और बताशे बेचते थे। ठीक सामने एक कच्चा कुऑ था, जहॉ उनकी रस्सी से बंधी एक डोल सदा पड़ी रहती थी। यहीं पर हमारे आमो का एक बगईचा भी था। क्रासिन्ग के दूसरी तरफ एक और झुग्गी थी, जहॉ सकलडीहा का एक हलवाई लड्डू, पेंड़ें, व बर्फी बेचता था। बस इतना ही आकर्षण था यहॉ, फिर भी अक्सर मै गॉव वालों से ये कहते सुनता थाः चला हो तनि मढईला घूम आवल जाय...।
इस क्रासिन्ग का नाम मढईला कैसे पड़ा ये मै न जान सका।
आगरे वाले चाचा को भोजापुर के तीन आकर्षणो ने बॉधाः सकलडीहा का देशी शरावखाना, निब्बू सिन्ह के पान की दुकान और चाची की गदराई जवानी। अब वो निरंकुश होकर शराब पीने लग पडे| निब्बू सिन्ह के पान से उनके दॉत इस कदर काले हुए कि वो अब नीम के दतुअनो से साफ होने से रहे। चाची हर वर्ष गर्भवती ही रहती थीं। अब तो मुझे उनके बच्चों की संख्या तक याद न रही। धनुषिया बाबा अपनी ऑखों से अपने बेटे की नाश लीला देखते रहे। आजी अपना हुक्का गुड़गुड़ाती रही। फायलेरिया की वजह से बाबा का बनारस और फूल्ली जाना भी बन्द हो गया। बॅटवारे के कारण

तो ऐसे भी गॉव मे उनके नाम पर थू थू हो रही थी। बड़े बेटे ने भी कभीं उन्हे अपनी नौकरी पर न बुलाया। उसने तो गॉव ही आना बन्द कर दिया। बेटियों को उनके ससुराल और उनकी अपनी जिम्मेवारियों ने बॉध लिया। सबसे छोटे बाबा तो एक पंडित जी से रामायन के कुछ छन्दो की व्याख्या सुनकर रो गा भी लेते थे. पर धनुषिया बाबा का जीवन एकाकी ही होता चला गया। शायद उन्हे ये आभास हो चला था कि ये सबकुछ उनकी संकीर्णता के वीभत्स परिणाम हैं। घर के इस भाग का अंधेरा गहराता ही जा रहा था। चाची की सुन्दरता न रही। चाचा ठर्रा पी पी कर कंकाल हो चले थे। बच्चे नंग धड़ंग इधर उधर हगते रहते थे। चाची की वो सुरीली आवाज भी न रही। वो दिन भर चौके मे बैठकर बाबा और आजी पर ताने कसती रहती थीं। आखिर मे आजी को ही अपना हुक्का छोड़कर उठना पड़ता था। बच्चों के हग्गल साफ करने पड़ते थे। उनकी गांड़े धोनी पड़ती थी। आजी ही एक थरिया मे बहू की पकाई रोटी और सब्जी बाबा के सामने पटक आती थीं। पानी लेने उन्हे खुद ही उठना पड़ता था। चौकी छोड़ने मे भी उन्हे अपनी मूठ वाली छड़ी के बावजूद कॉख कॉख कर पॉच बार उठना और बैठना पड़ता था।

चाचा आए दिन पी पाकर चाची को पीटते थे और बच्चों को लतियाते जुतियाते थे।

धनुषिया बाबा अपना पेन्शन लेने मुगलसराय स्वयम ही जाते थे। उनके पेन्शन से ही घर मे साबुन. तेल. नमक चीनी. तम्बाकू इत्यादि आता था। एक बार वो अपना पेन्शन लेने मुगलसराय गए हुए थे। पुल की सीढियॉ चढने के दौरान उन्हे दिल का दौरा पड़ा। ठीक दोपहर का समय था। गर्मी की चिलचिलाती धूप मे पुल पर उनकी हृदय गति बन्द हो गई। उनके शरीर का भार उनकी मूठ वाली छड़ी न सम्हाल सकी. चरमराकर बीच से टूट गई। धनुषिया बाबा न रहे। पुल पर हजारों गाड़ियों. बसों. टमटमों. बैलगाड़ियों और पैदलों की रेल पेल थी। संयोग से गॉव का ही एक नाई उन्हे पहचान लिया. अन्यथा पता नही कब तक उनकी लाश इस चिलचिलाती धूप मे धूल धक्कड़ों मे सनती रहती। अविलम्ब उनकी लाश एक ट्रेक्टर से गॉव लाई गई। आजी का सुहाग उजड़ गया। मेरे बेचन चाचा अन्तयेष्टि की तैयारी मे जुट गए। आजी ने अपनी दो लाल चूड़ियां तोड़ीं. सफेद साड़ी पहनी और अपना हुक्का सम्हाला। ट्रेक्टर से बाबा की लाश बनारस के मनिकणिका घाट पर लाई गई। मुखाग्नि उनके छोटे बेटे ने दी। बेचन चाचा अपना बाल मुड़वाकर थके हारे रोते कलपते गॉव वापस आए। न तो धनुषिया बाबा के बड़े बेटे अन्तयेष्टि मे आ सके और न उनकी कोई बेटी आजी का हॉथ थामने आई। भृगवंश का ये सितारा मुगलसराय के पुल पर धूल धक्कड़ों के बीच सो गया. लुप्त हो गया. खो गया। उनके गुजरने के बाद आजी भी लम्बा न जी सकीं। हुक्का गुड़गुड़ाते वो भी एक दिन लुढक पड़ीं और अपनी ऑखें मूंद ली।

आगरा वाले चाचा उम्र मे अपने सारे भाई बहनों से छोटे थे। उन्हे हम बच्चा चाचा कहके बुलाते थे। बच्चा चाचा अनाथ हो गए। ऐसे भी वो सनाथ कब थे! बाबा की दुनाली बन्दूक उन्होने सम्हाल ली।

अब आया वो निर्णायक दिन। बच्चा चाचा की अविराम प्रतिक्षा अब उनके संतुलन मे न रहीः अऊर का का बाबूजी छोड़ गईल हउँअ!...

बईठका के कमरे का ताला खुला. बक्सों के ताले खुले। धनुषिया बाबा के वर्षो की संचित निधि किसी कबाड़खाने से कम न थी। अपने वर्षो की नौकरी मे पढा गया एक भी अखबार वो न फेंके थे। सब सहेज कर रखे थे। दाढी के ब्लेड से लेकर जीभछोलनी तक. कांटी से लेकर नट वोल्ट तक. मुर्चे लगे चाकू. दाढी के ब्रूश. भले ही उसमे चार बाल ही क्यों न शेष बचे हों. सब कुछ संजो कर रखे थे। बच्चा चाचा को इस कमरे मे रूपया पैसा तो दूर रहा एक खोटा सिक्का तक न मिला। गारी गुप्ता करके वो सारा कबाड़ सामने की पोखरी के पास फिंकवा आए। सारे गॉव के लड़के इन सामानों पर टूट पड़े. जिसके हॉथ जो लगा. उठा के भागा।

बच्चा चाचा को विरासत मे एक ट्रेक्टर और एक दुनाली बन्दूक मिली। वो अक्सर अपनी बन्दूक एक तेल से सनी अंगोछी से साफ करते रहते थे। ट्रेक्टर भी अक्सर टूटा ही रहता था. जिसकी मरम्मत मे वो जूझे रहते थे। नटों पर मारे गए हथौड़े अक्सर उनके अपने हॉथों पर पड़ते थे। रेन्च से बजाय नटों को घूमाने के वो अपनी उँगलिया ही घूमा के तोड़ते मरोड़ते रहते थे। चाची भी अब काफी चिड़चिड़ी हो चली थीं। अक्सर वो अपने बच्चों को मारती पीटती रहती थीं। सफेद मोतियों की तरह अपने चमकते दॉत वो भी पान खा खाकर कोयले की तरह काला कर बैठी थीं।

सारे बच्चे बच्चा चाचा पर ही गए थे. दुबले पतले. पर भवें उन्हे अपने मॉ से मिली थी. काले. घने और कमानीदार। ये सब विद्दा फुआ के बच्चों के छोड़े कपड़े पा जाते थे।

पुश्तैनी मकान मे उनका हिस्सा ढहता ही जा रहा था। जब मेरे अपने बाबा का मकान ढहवाया गया. तब बच्चा चाचा के हिस्से का मकान औार उनका परिवार अब विल्कुल नंगा वीभत्स हमारे सामने आया। बेचन चाचा ने एक नया बईठका बनवाया और पुराने बईठके मे हम रहने लगे।

अचानक एक दिन बच्चा चाचा के हिस्से वाले मकान मे भी दो चार मजदूर काम पर आ लगे। सबसे पहले वो हमारी तरफ एक मिट्टी की ऊँची दीवार चुन दिए. फिर उन्होने उनकी छोटी सी बईठका के खपरैल बदले। अहाते मे एक साफ सूथरा कच्चा लैट्रिन भी बना। सारे गॉव वाले आवाक थे। बच्चा चाचा अपनी लुंगी मे पीछे एक हॉथ घुसेड़े पान चुभलाते सारे मरम्मतों की निगरानी करते थे। हमे पता लगा कि उनके बड़े भाई साहब भोजापुर आने वाले हैं. जो उन दिनों दुर्गापुर मे असिस्टेन्ट प्लानिंग डायरेक्टर थे।

पता नहीं वो क्या सोचकर गॉव न आए। बच्चा चाचा का सारा श्रम और पैसा यूँ ही जाया हुआ। बाद के दिनो मे वो स्वयम और उनके बच्चे हग हग कर लैट्रिन पाट मारे।

अब बच्चा चाचा पी पाकर आए दिन अकारण इधर उधर झगड़ा फसाद करने लगे थे। गॉव के दूसरे टोले मे कई उनके दुश्मन बन गए थे। बेचन चाचा की वजह से वो बचते जा रहे थे। आसपास के इलाकों मे उनकी गीदड़ भभकी हास्यास्पद होती चली जा रही थी। कभीं कभीं वो बेचन चाचा को भी पी पाकर गई रात मे गरियात थे. पर चाचा उनकी गालियों को अनसुनी कर जाते थे। दुनाली बन्दूक और भृगुवंश उनकी कब तक रक्षा करते! दूसरे टोले के लड़के मौके के इन्तजार मे थे ही। एक दिन मौका पाकर उन्होने उन्हे लाठियों से लहुलुहान कर डाला। सिर बिल्कुल फट गया था। बनारस के कबीरचौरे अस्पताल मे उनका बड़ा लम्बा इलाज चला। पुलिस भी गिरफ्तारी के नाम पर निष्क्रिय व उदासीन रही। उनके अपने खिलाफ भी कई फौजदारी के मुकदमे दर्ज थे। चमारटोली भी सुगबुगा रही थी। पी पाकर चमारों को अकारण पीट पाट देना उनके लिए आम और सामान्य बनता जा रहा था।

एक बात हमारे गॉव मे धीरे धीरे स्पष्ट होती जा रही थीः ठाकुरों के घर ढह रहे थे. अहीर. चमार. नाई. कहांर अपना पक्का मकान खड़ा किए जा रहे थे। इन कौमो मे काफी नौकरी के पेशे मे आ चुके थे। व्यवसायों की तरफ झुके थे। इनके बच्चे पढाई की तरफ जा लगे थे। ठाकुर अपनी पुश्तैनी जमीने

बॉटे जा रहे थे।समवेत वो रहना नही चाहते थे।कल का जाना माना गृहस्थ आज दो बिघे जमीन का काश्तदार था।एक घर के अन्दर दसों दीवारें बीसों चूल्हे।ठाकुर साहब अकेले बैठे चूल्हा झोंके जा रहे थे।आलू भूने जा रहे थें या फिर इनार पर अपनी धोती सनलाईट से कचारे जा रहे थे|अकेले खड़े दौनी कर रहे थे|एक खूरपी अपने हाथ मे लिए अपने हिस्से की जमीन पर झाड़ा फिरने जा रहे थे।दूसरी तरफ अहीर सिल्क के कुर्ते से अपने सोने की मोटी जंजीरें झलका रहे थे।नाई चमड़े की ब्रीफकेस ले कर घूम रहे थे। धोबी एस पी की वर्दी पहने बैठा था|चमारों के बच्चे इन्टर मे टाप कर रहे थे।

ठाकुरों की ये पुश्तैनी जमीने उन्हे कहीं की न छोड़ीं।उन्हे अकर्मण्य, जाहिल और निकम्मा बनाती चली गईं।ठाकुरों मे भय समाता चला जा रहा था।"धर चमार सारे क" कहने का जमाना कब का जा चुका था।उन्हे पता था कि अगला उन्हे प्रत्यूत्तर मे दलीदर और भूख्खड़ कह मारेगा।पर वो अभी भी न जगे थें और न कभीं जगेंगे।दो बिघों का फिर से बॅटवारा होगा और होता रहेगा।फिर इन टुकड़ो पर धान, गेहूँ की फसलें नही लहलहाएगी।इनमे पैदा होगा भिन्डी, नेनुआ, लउकी और कॅकड़ी और फिर उनकी सन्ताने ठेला गाड़ी मे ये सब्जिया लेकर सकलडीहा, चन्दौली, बनारस और रामनगर मे सस्वर चिलचिलाती धूप मे कोयरियों की तरह धूल फाकेंगी।लाल ॲगोछी से अपने गले और कॉख का पसीना पोछेंगी।ये समय उनसे ज्यादे दूर नही है।उनके नाक के सामने खड़ा है।जली रस्सी के ऐंठन को ही देखकर वो अपनी मूछें ऐंठ रहे हैं जिसपर मलने के लिए दो बूँद देशी घी तक उनके पास नही है।वो इस बात को न मानना चाहते हैं और न समझना चाहते हैं कि सत्य के पास एक बड़ा जिद्दी स्वभाव होता है...नकारने पर वो और वीभत्स होता चला जाता है।

हिम्मत, दिलेरी, और जोश ये सिर्फ ठाकुरों को ही विरासत मे नही मिली है|ये भी बच्चा चाचा को एक दिन चमटोली का एक लड़का समझा गया।

वो दिन के समय निब्बू सिन्ह की दुकान पर पान गुलगुलाते अखबार पढ रहे थे।गॉव के दो चार लोग भी वहॉ थे।अचानक चमटोली का एक कम उम्र का सॉवला सा लड़का अपने दोनो हॉथ पीठ के पीछे छुपाए निब्बू सिंह की झुग्गी पर आया और बच्चा चाचा के सामने खड़ा हो गया।लाल ऑखें किए वो बच्चा चाचा को घूरा और दहाड़ते हुए बोलाःकब तक हमारी मॉ बहने आपलोगों के नाजायज बच्चों को जनती रहेंगी बाबू साहब!इसके पहले कि बच्चा चाचा सम्हलते, वो अपनी कुल्हाड़ी के एक ही वार से वो उनका सर धड़ से अलग करके भाग खड़ा हुआ।

भृगवंश का एक और सितारा टूटकर मढईला मे रोड़े गिट्टियों पर बिखर गया।

बच्चा चाचा के बच्चे अभीं छोटे ही थे।कुछ वर्षो तक चाची ही खेती का काम सम्हालीं।अब उनका सबसे बड़ा बेटा राजू ही खेती करता या करवाता है।पिछले वर्ष एक लम्बे अन्तराल के बाद मै बाद गॉव गया था।राजू मुझसे मिलने आया था।स्पन्ज के चप्पल, फुलपैंट और सैन्डो की गन्जी पहने था।गले मे एक हरे रंग की अंगोछी लपेटे हुए था।वो शक्ल सूरत मे बच्चा चाचा का बिल्कुल कार्बन कॉपी था।चाची से मिलना न हो पाया।उन्हे खबर तो भिजवाया था, पर वो शायद मुझसे मिलना न चाहती थीं।

बच्चा चाचा ने जिस विधि से अपनी मौत निर्धारित कर रखी थी, उससे लाखों दर्जे सहज उनकी ये मौत मुझे लगी।जीवन मे सपने कौन नही देखता!हम सभी देखते हैं।बच्चा चाचा ने भी देखा होगा।बस उनके सपनो का कोई आकार या आयाम न रहा होगा।उन्होने अपने सपनो को अपने सामर्थ्य के फीते से मापा ही नही।सपने हठी तब हो जाते हैं जब हम उनके पूरे होने का हठ अपने मन मे पाल लेते हैं बगैर अपनी कूवत और सामर्थ्य जाने।फिर वो हमे तोड़ने लगते हैं।ठर्रे से भरे टूटे चिनके कपों मे हम अपने सपने ही नहीं वरन अपने को ही दफनाने मे लग जाते हैं।

जहॉ तक मेरा प्रश्न है, मैने बच्चा चाचा की आत्मीयता मे न कभीं कोई खोट देखा और न पाया।

मै उनका सर्वप्रिय भतीजा सदैव बना रहा।सब कुछ के बावजूद मै जब भी भोजापुर गया, उनसे मिलने गया।गले से लगा कर वो अपना सारा काम छोड़ कर मुझे साथ घर लिवा लाए और चाची को प्याज की पकौड़ियॉ बनाने को कहके घंटों बैठे मेरा हाल चाल सुनते रहे।अपनी छोटी उम्र मे भी मै उनका एक खास मेहमान होता था।बड़ी तबीयत से वो मेरा सब कुछ कहा सुना करते थे और मेरी गलतियों के बावजूद भी सदैव मेरा पक्ष लिया करते थे।

प्रमोद कुमार सिंह